झारखण्ड में आदिवासी अस्मिता एवं वनीय अन्तर्निर्भरता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

श्रद्धा रानी कश्यप*

आदिवासियों को भारतवर्ष का प्राचीन वासी माना जाता है। भारतीय संविधान में इन्हें अनुसूचित जनजाति कहा गया है। भारतवर्ष पर जब आर्य प्रजातियों का आगमन हुआ तब ये आदिवासी समाज सदियों पूर्व झारखंड के निर्जन एवं वन आच्छादित जगहों पर आकर बस गया। झारखण्ड का सम्पूर्ण परिदृश्य हरे भरे मनमोहक जंगलों से आच्छादित है अतः शुरू से ही इनके जीवन की धूरी जंगलों के ईर्द–गिर्द चलता है। इनके जीवन का बुनियादी आधार बन ही है। वनों के सानिध्य के कारण इनकी सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवनशैली पर वनों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

आदिवासियों की अपनी विशिष्ट वेशभूषा, भाषा, सांस्कृतिक सभ्यता एवं लोकाचार है। इनके सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना में अनेक आकर्षक बिंदू हैं जो इनके विशिष्ट पहचान को परिलक्षित करते हैं।

झारखण्ड तथा झारखण्ड के आदिवासी :–

झारखण्ड राज्य का अभ्युदय 15 नवंबर 2000 ई को भारत के 28 वें राज्य के रूप में हुआ था। झारखण्ड एक अनुसूचित क्षेत्र है जिसमें संविधान के पांचवीं अनुसूची के प्रावधानों को लागू किया गया है। झारखण्डी संस्कृति की पहचान का आधार यहाँ की आदिवासी संस्कृति की अनमोल विरासत है।

झारखण्ड में कुल 32 जनजातियाँ वास करतीं हैं जिनमें से 8 आदिम जनजाति की श्रेणी रखा गया है – ये इस प्रकार हैं

संथाल, उराँव, मुण्डा, हो, खेरवार, लोहरा, खडिया, भूमिज, गोंड, महली, बेदिया, चेरो, करमाली, चीक बड़ाईक, किसान, बिंझिया, कवंर, कोल, बिरहोर, बैगा, माल पहाड़िया, सौरिया पहाड़िया, सबर, खोंड, बथुड़ी, बंजारा, बिरजिया, गोड़ाइत, असुर, कोरवा, कोरा एवं परहिया।

2011 की जनगणना के अनुसार आदिवासियों की कुल जनसंख्या 8645042 (लगभग 26.2%) है। झारखण्ड में निवास करने वाली प्रायः सभी जनजातियाँ वन्य क्षेत्रों में ही वास करती है। आदिकाल से इनका परम्परागत जनजीवन, जीवनशैली व जीविकोपार्जन वन पर आधारित रही है।

अध्ययन का उद्देश्य :–

1 आदिवासी अस्मिता पर वनीय अन्तनिर्भरता के प्रभाव को स्पष्ट करना।

2 आदिवासी अस्मिता को बनाए रखने में वन की भूमिका को स्पष्ट करना।

3 नए वननीति और वनों के ह्रास तथा विकास परियोजनाओं के कारण आदिवासी अस्मिता एवं वनों पर पड़ने वाले प्रभाव को स्पष्ट करना है।

अध्ययन पद्धति :–

प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों के समाजशास्त्रीय विश्लषण पर आधारित है। प्राथमिक स्रोतों से तथ्य एकत्रित करने में अवलोकन एवं साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया है तथा द्वितीयक स्रोत में विभिन्न पुस्तकों एवं अखबारों से तथ्य एकत्रित किया गया है।

आदिवासी अस्मिता एवं वन के बीच संबंध :–

झारखण्ड का 29 फीसदी इलाका वन क्षेत्र है। आदिवाी समाज में एक व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन चक्र, उसके जीवन के समस्त संस्कार जल, जंगल और जमीन से जुड़े होते हैं। यहीं उनकी आत्मा बसती है। जंगलों में उनके पूर्वजों की स्मृतियाँ एवं टोटम वास करते हैं। वन्य परिवेश ने आदिवासियों की सांस्कृतिक परम्परा, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक जन–जीवन को पूरी तरह से प्रभावित किया है।

* एम0फिल0 शोधार्थी, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची

शिकारी और संग्राहक जनजातियाँ 90% जीविका वनों से प्राप्त करती है और कृषक जनजातियाँ भी अपनी आवश्यकता के लिए 40% जंगलों पर निर्भर करती हैं। (शर्मा, विमला चरण, 2011, 30)

झारखण्ड में जंगल आजीविका का बड़ा स्रोत है। साल के लगभग चार – छः महीने जंगल से लोगों का गुजारा होता है। जंगल जाना और आजीविका के लिए संसाधन लान उनके दिनचर्या का हिस्सा है। चिरौंजी, पियार, सहतुत, गोंद, आँवला, दतुवन, दोना – पत्तल आदि उन्हें जंगल से प्राप्त होता है जो उन्हें जीने के लिए काफी है। देहात के बाजारों में औरतें लकड़ी बेचने के साथ – साथ फल – फूल को बेचकर आर्थिक तौर पर निर्भर होती है और भूख से अपने व अपने परिवार को बचाती हैं। जंगल समो की आत्मनिर्भरता का बड़ा केन्द्र है। (वासवी, 2003, 139) झारखण्ड के आदिवासियों द्वारा जंगलों में लाख की खेती की जाती है अतः ये भारत का सबसे बड़ा लाख उत्पादक राज्य है। केन्दू पत्ता तथा विभिन्न जड़ी बूटी वाल औषधिया पौधे क संकलन से यहाँ का आदिवासी आत्मनिर्भर रहा है।

दरअसल भारत का आदिवासी मूलतः किसान है और जल–जंगल–जमीन से उसका नाड़–नाल का रिश्ता है। वह जंगल के उत्पाद पर गुजर–बसर करता है और प्रकृति तथा उसकी संतति के साथ सहयोगी भूमिका निभाते हुए उसकी रक्षा भी करता है। वह उपभोक्ता भी है और पोषक भी। विडम्बना यह है कि भारत के इस आदिवासी समूह या वर्ग से भारत की शेष आबादी आज भी पूरी तरह परिचित नहीं है और तो और जो लाग उनपर राज कर रहे हैं वे भी उनकी संस्कृति, भाषा, जीवन– शैली, मूल्यों, आचार–संहिताओं तथा उनकी लोकतांत्रिक प्रशासनिक व्यवस्था से अनभिज्ञ हैं। (गुप्ता, रमणिका, 2014; 14:15)

आदिवासियों की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा उनके नृत्य, गीत–संगीत, लोककला(कोहबर, सोहरई), उनके सौंदर्य प्रतिमान, खान–पान, रहन–सहन, भाषा, धर्म सबकुछ जल, जंगल और जमीन पर आधारित हैं। इन्होंने जंगल को अपना भगवान, पूर्व और दोस्त मानकर इनकी पूजा अर्चना की है। इनके पूर्वजों ने यहाँ के जंगलों को समृद्ध किया है।

राष्ट्रीय कृषि आयुक्त 1976 के अतिरिक्त भी समय समय पर सरकारी तंत्र ने स्वीकार किया है कि वनों से प्राप्त वन उत्पादिन वस्तुएँ आदिवासियों की समद्धि का प्रतीक रही है। (गील, 2007; 26)

वन ह्रास, वन कानून तथा विकास की नई रणनीतियों के कारण वनभूमी से बेदखल किए जाने के पश्चात आदिवासी अस्मिता संकट के मुद्दे :–

ववर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या के घनत्व के दबाव, व शहरीकरण व औद्योगीकरण की प्रकिया में तेजी के साथ वन का ह्रास हुआ है। ''आजादी के बाद छौटानागपूर क्षेत्र के जंगल का स्वरूप बदल कर बदत्तर हो गया, कम्पनियों ने जंगल को सिर्फ नुकसान ही पहूँचाए। बोकारो स्टील प्लांट, एच0 ई0 सी0 कारखाना, टाटा कारखाना लाखों एकड़ जंगल को उजाड़ कर बसाए गए, अभी भी जंगलों का दोहन जारी है। जिससे खेतिहर भूमि बंजर हो गई और छोटानागपूर में भूचा से मौतें होने लगी। पूराने वन कानून आज भी राज्य के अंदर लागू हैं। इस कानून से आदिवासी समुदाय के जीवन पर खतरे उत्पन्न होने शुरू हो गए। साथ ही कानून का सहारा लेकर वन विभाग एवं सरकार ने आदिवासियों को जंगल से बेदखल करना शुरू कर दिया। (आलोका : 2013;46)

जंगल के जंगल उजड़ रहे हैं। आदिवासी अपने जमीन से बेदखल हो रहे हैं। आज विकास की सबवसे ज्यादा कीमत आदिवासियों ने चुकाई है। आज भी जहाँ विकास की बात होती है आदिवासी सहम और उर जाते हैं, सरकार पर विश्वास नहीं होता। विकास होना चाहिए लेकिन आदिवासियों को उजाड़ने की कीमत पर नहीं। सरकार इनके लिए जो भी कानून या अधिकार देने की बात करती है, वह ग्रास रूट तक नहीं पहुँच पाता। वन अधिकार का कानून आया लेकिन उसको लागू करने में राज्यों ने रूचि नहीं दिखई आदिवासियों को जंगल पर अधिकार नहीं मिला। (डॉ उराँव, रामेश्वर : 2016, प्रभात खबरः पृष्ठ 11, 9 अगस्त)

आदिवासियों ने जंगल–झाड़ काटकर इसे खती योग्य बनया और यहाँ बसते गए, यह स्थाना खूँटकट्टीदार (भुईहर) लोगों का प्रदेश बना। अब सिर्फ 2482 भुईहर मौजा ही झारखण्ड के रिवीजनल सर्वे रिकार्ड में बचे हैं। खूटकट्टी व्यवस्था के भी अवशेष मात्र ही रह गए हैं। यह भूमि व्यवस्था न सिर्फ

आदिवासियों के जिंदगी की सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक व राजनैतिक पहलुओं से जुड़ा है बल्कि उनके अस्तित्व और पहचान का भी पर्याय है। (फादर सोरेंग जेवियरः 2016 प्रभात खबर, 9 अगस्त)

2004 में मुण्डारी खुटकट्टी के कम होते गाँव पर मुण्डाओं ने रोष व्यक्त किया और अपने छिनते शासन को वापस करने के लिए 2004 नवंबर माह में एक रिट याचिका दायर की जिसमें मुण्डी खुटकट्टी गाँव को मान्यता देने और छीने गए गाँवों को वापस करने के लिए केस दायर किया गया है जिसका अबतक कोई नतीजा नहीं आया है। (आलोकाः 2013; 49)

उधर आदिवासी जंगल संबंधी अपने अधिकार पाने के लिए आन्दोलन कर रहे हैं दूसरी ओर नरेगा कानून के तहत जंगल के किनारे रहने वाले आदिवासियों के जीविका का आधार भूमि है उसमें वन रक्षा के नाम पर वृक्षारोपण का काम किया जा रहा है और की खेतीहर भूमी को वन भूमी में बदलने पर जोर दिया जा रहा है। (तदैवः 2013; 48)

आदिवासी समाज को जल–जंगल–जमीन विहीन होने से बचाने के लिए ही सी0 एन0 टी0 एक्ट तथा एस0 पी0 टी0 एक्ट बनाया गया। यह आदिवासी नायकों की देन है जिसकी मूल भावनाओं में सत्ता पक्ष हमेशा अपने हित में संशोधन पर संशोधन करने आ रहा है। हर संशोधन आदिवासी समाज के प्रतिकूल ही हुआ है। (बारला, दामिनीः प्रभात खबर; 2016 9 अगस्त, पृ संख्या – 11)

झारखण्ड के जंगलों को आरक्षित वन घोषित कर आदिवासियों की आर्थिक अस्मिता पर प्रहार किया गया यह सही है कि वर्तमान में सखुआ वृक्ष की संख्या कम होती जा रही है अतः इसे आरक्षित करना जरूरी था किंतु आज सामाजिक वनिकि के नाम पर यूकेलिप्टस के वृक्ष जंगल क्षेत्रों में लगाए जा रहे हैं जिसका कि आदिवासी हित में कोई महत्व नहीं है। सखुआ वृक्ष पर आदिवासियों की चाला माँ निवास करती है। इसके फल, फूल, पत्ती, तना सब आदिवासियों के काम आते हैं। यह बात बिल्कुल सत्य है कि जब भी अविभाजित बिहार, बंगाल में भयंकर अकाल आया यहाँ झारखंड के वन वासियों को जंगलों ने बचाया है।

सल का वृक्ष जो झारखण्ड का मूल जंगल है, तेजी से साफ होता जा रहा है। 2001 में वन विभाग के अधिकारियों द्वारा जंगल के किनारे यह कहकर स्ट्रेच (गड्ढा) खोदना शुरू कर दिया गया कि लागातार हाथी का हमला गाँव के अंदर तेजी से हो रहा है। हाथी को रोकने के लिए गड्ढा खोद दिया जिससे जंगल के किनारे बसे गाँव जो वर्षों से जंगल पर निर्भर रहे हैं अचानक से जंगल से बेदखल कर दिए गए।(आलोकाः 2013; 47)

कहीं कहीं तो जंगलों की घेराबंदी भी की जा रही है। जंगल वासी जो घने जंगलों के बीच निवास करते है उनमें से अधिकतर के पास अपनी भूमी नहीं है और झारखण्ड में स्थानियता की मांग 1932 के खतियान को देखकर देने की मांग की जाती है ऐसे में इन जंगल वासियों के पास यहाँ के निवासी होने का प्रमाण ही नहीं है। यद्यपि झारखण्ड सरकार इन्हें भी भूमी पट्टा प्रदान करने के लिए कृतसंकल्पित है।

वन ग्राम के 15000 आदिवासी और दलितों का क्या होगा जिनके नाम के पट्टे आज तक उनके पास नहीं हैं जबकि वे झारखण्डी हैं। (आलोकाः 2013; 48)

वन नीति :–

अठारहवीं शताब्दी तक जब तक किसी प्रकार की वन नीति नहीं बनी थी ये जनजातियाँ बेहतर स्थिति में थी। वनोत्पाद उनकी मौलिक आवश्यक्ताओं की पूर्ति में सक्षम थे। वे वनों की संतान भी थे, स्वामी भी। ब्रिटिश सरकार ने सर्वप्रथम वन नीति बनाई और इनके अधिकार सीमित कर दिया। बाद में भारत सरकार ने भी नई नीति बनाई और घोषणा की कि, यह सब आदिवासी हित में किया गया है। इस प्रकार ब्रिटिश काल से स्वतंत्र में भारत में कई वन नीति बनाई गई जैसे – वन कानून –1865, इंडियन फोरेस्ट एक्ट 1878 और 1927, नई वन नीति – 1952, वन नीति – 1980।

इन वन कानूनों ने आदिवासी को उनके अपने ही जंगलों से पृथक कर दिया।

''ऐसा नहीं है कि जनजातियों को वनों मे कोई अधिकार प्राप्त नहीं हैं। जनजातियों को यह अधिकार है कि वे वनों से लघु वन उत्पाद एकत्रित कर सकते हैं। दूसरी ओर वन के चौकीदार को यह अधिकार दिया गया है कि यदि उसे अंदेशा हो कि कोई व्यक्ति वन को हानि पहूँचाने को उद्देश्य से

वन में प्रविष्ट हुआ है तो वह उसे गिरफतार कर सकता है। तो जैसे ही बेचार आदिवासी जंगल कमी सीमा में प्रवेश करता है फोरेस्ट गार्ड को उसपर संदेह हो जाता है और वह आदिवासी को गिरफतार कर लेता है। कुछ देकर या एकत्रित वन उत्पाद का एक बड़ा भाग देकर वह अपनी जान छुड़ाता है। (वैद्य, नरेश कुमार : 2003;183)

केन्द्र सरकार ने 2006 में वन कानून पारित कर जंगल के अंदर रहने वाले लोगों को अपना अधिकार सौंपा है किंतु इस कानून से आम जनता संतुष्ट नहीं है क्योंकि वन कानून ने वन पर तो अधिकार दिया है किंतु वन उपज पर गाँव को अधिकार नहीं दिए गए है।(आलोकाः 2013; 47) इस प्रकार सन् 2012 में वन अधिकारिता अधिनियम बन जिसके तहत वन में निवास करने वाले को वन पर अधिकार दिया गया है। किंतु आज भी यदि गाँव में किसी आदिवाी को शादी व्याह में मड़वा छारने हेतु लकड़ी की आवश्यकता होती है तो उसे ग्राम सभा की बैठक में मंजूरी हासिल कर सरकार से लकड़ी खरीदनी पड़ती है। वनोपज संकलन के समय उनका सामना वनरक्षियों से होती है।

आज जंगल पर एक तरह से सरकार के नाम पर वन विभाग के अधिकारियों ओर उससे जुड़े ठेकेदारों का एकछत्र राज स्थापित हो गया है। इनके साठ गाँठ से वन मे प्रतिदिन अवैध धंधा चलता है, पेड़ कटते हैं और बेशकीमती लकड़ियाँ बाजार भेज दी जाती है। एशिया का सबसे घना वन सिंहभूम का सारण्डा वन माना जाता रहा है लेकिन वह आज हर रोज बदशक्ल हो रहा है। वन संरक्षण के नाम पर कानून बनाकर आदिवासियों को वन से अलग–थलग किया गया लेकिन इन कानूनों पर टिके शासन ने वन को असुरक्षित कर डाला है। (उर्मिलेश, 1999; 51)

निष्कर्ष :–

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि आदिकाल से ही वन आदिवासियों की धरोहर रहे हैं। वन और आदिवासी एक दूसरे के पूरक है। दोनो के बीच अन्तरनिर्भरता पाई जाती है। सदियों से आदिवासी के पुरखों ने वनो की रक्षा के बदले में वन उनका भरण पोषण व संरक्षण करता आया है, उनकी आजीविका, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक जीवनशैली वन आधारित रही है। वर्तमान समय में वनों को ह्रास, वन नीति, विकास की नई रणनीति के तहत इन्हें जमीन जंगलों से पृथक करने के फलस्वरूप तथा नई आर्थिक नीति के कारण जंगलों के बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए मुनाफा कमाने का केन्द्र बन जाने व कच्चा माल पाने के स्रोत बन जाने के कारण आदिवासियों का परम्परागत जीवन दाँव पर लग गया है। जिससे आदिवासी अस्मिता के अनेक प्रश्न आज उठकर सामने आ रहे हैं।

संदर्भ सूची :–

1. आलोका (2013) : झारखण्ड की श्रमिक महिलाएँ, के0 के0 पब्लिकेशन, इलाहाबाद
2. उर्मिलेश (1999) : झारखण्ड जादूई जमीन का अंधेरा, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली
3. उराँव, रामेश्वर (2016, 9 अगस्त) : प्रभात खबर राँची, पृष्ठ सं0 – 11
4. गुप्ता रमणीका (2014) : आदिवासी अस्मिता का संकट, सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली
5. गील, संजय (2007) : जनजातीय समाज एवं वनीय अन्तनिर्भरता, अंकुर प्रकाशन उदयपुर
6. बरला, दयामनी (2016, 9 अगस्त) : प्रभात खबर राँची, पृष्ठ सं0 – 11
7. वासवी (2003): ताबेनजोम, जमीन का हिस्सा, आधार प्रकाशन पंचकुला हरियाणा
8. वैद्य, नरेश कुमार (2003) : जनजातीय विकास मिथक एवं यथार्थ, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली
9. शर्मा, विमला चरण (2011) : झारखण्ड भूमि और भूमीपुत्र, झारखण्ड झरोखा, राँची
10. सेरेंग, फादर जेवियर (2016, 9 अगस्त) : प्रभात खबर, राँची पृष्ठ सं0 – 11

●